RESEARCH HUB – International Multidisciplinary Research Journal (RHIMRJ)
Research Paper

बन्दोपाध्याय कमिटी के रिपोर्ट की समीक्षा

डॉ0 जितेन्द्र प्रसाद

अर्थशास्त्र विभाग, वीर कुँवर सिंह विश्वविद्यालय, आरा (बिहार)

भूमि सुधार के जरिए वामपंथी उग्रवाद की अपील को बेअसर कर देने का विचार नया नहीं था। आजादी के बाद बनी राज्य की कांग्रेसी सरकारों ने भूमि सुधार संबंधी कई कानून बनाए थे, परंतु सवर्णों का जो बड़े जमींदार थे, समर्थन खोने के डर से उन्होंने जमींदारी उन्मूलन के सिवाय किसी कानून को लागू नहीं किया था। इन कानूनों को और अधिक सुनिर्दिष्ट, कड़े और प्रभावी बनाने के घोषित उद्देश्य से बीते वर्षों में उन्होंने उन कानूनों में कई संशोधन पारित किए, परंतु उन्हें उत्साह के साथ कभी लागू नहीं किया गया।

उन्नीस सौ साठ के दशक के मध्य में बने समाजवादी और साम्यवादी तत्त्वों की मजबूत उपस्थिति वाले राजनीतिक गठबंधनों ने राज्य में कांग्रेस को सत्ता से बाहर कर दिया था। इन्होंने भूमि सुधार के इन बेजान कानूनों में कुछ जान डालनी चाही, परंतु उनके कार्यकाल इतने छोटे थे कि वे कोई फर्क पैदा नहीं कर पाए। एक गैर–कांग्रेसी सरकार द्वारा दूसरा प्रयास 1977–78 में किया गया जब मुख्यमंत्री कर्पूरी ठाकुर ने कोसी नदी सिंचाई व्यवस्था की एक शाखा नहर के क्षेत्र में पड़ने वाले पूर्णिया जिले के पाँच प्रखण्डों में भूमि सुधार कानून लागू करने के लिए क्रांति नामक एक योजना तैयार की। उनके मंत्रीमंडलीय सहयोगी इस परियोजना के प्रति उदासीन या उसके विरोधी थे। लेकिन समाजवाद के प्रति अपनी प्रतिबद्धता से प्रेरित कर्पूरी, सुधारों को लेकर उत्साहित अपने दो शीर्ष अधिकारियों पी.एस. अप्पू और के.बी. सक्सेना के सहयोग से इन सुधारों को लागू करने पर आमदा थे।

कर्पूरी का सपना यह था कि कोसी क्रांति एक बार सफल हो गई तो पूरे राज्य में उसे दोहराया जा सकता है। परियोजना का मुख्य फोकस भूस्वामित्व और बँटाईदारी को लेकर निश्चित हो सकें। चूँकि राज्य की सबसे बड़ी जमींदारियाँ पूर्णियाँ में थीं, इस जिले में बँटाईदारों की संख्या भी बहुत ज्यादा थी।

कोसी क्रांति गाँवों में ही राजस्व अधिकारियों और किरानियों द्वारा शिविर लगाकर भू–स्वामित्व संबंधी रिकॉड तैयार करने तथा दावों और प्रतिदावों की सुनवाई करने वाली साधारण पहल नहीं थी। यह पहल बहुत कुछ उसी तर्ज पर, जिसके लिए बाद में पश्चिम बंगाल का ऑपरेशन एर्ग मशहुर हुआ था, एक ओर तो किसानों, किसान संगठनों और स्वयंसेवी संस्थाओं की एकजुटता पर तथा दूसरी ओर सरकारी अधिकारियों को प्रेरित करने पर निर्भर रहना चाहती थी। परंतु वास्तविक व्यवहार में हुआ यह कि अभी मुश्किल से कुछ गाँवों में उपरोक्त संस्थाओं की लामबंदी शुरू हुई थी कि जनता पार्टी के सवर्ण मंत्रियों और विधायकों ने कर्पूरी को चेतावनी दे डाली कि इस कार्यक्रम से जमींदारें और बँटाईदारों के बीच दंगे भड़क सकते हैं। ''कोसी क्रांति एक खूनी क्रांति में बदल जाएगी, ''उन्होंने कहा। अपनी कुरसी बचाने के लिए सवर्ण विधायकों के समर्थन पर निर्भर कर्पूरी ने कोसी क्रांति परियोजना को बंद करना ही बेहतर समझा।

फिर भी, भूमि सुधार लागू करने में राजनीतिक दलों की अनिच्छा के बावजूद अपने अनोखे तरीके से राज्य में ये सुधार लागू हो रहे थे। पहले बदलाव संबंधित कानूनों के पारित होने और उनके छिटपुट क्रियान्वयन से आए, जिन्होंने बड़े जमींदारों को भूमि की उच्चतम सीमा के अनुसार अपनी भूसंपत्तियों को विभाजित करने और कुछ मामलों में, इस डर से कि सरकार कहीं उन्हें छीन न ले, भू–खंडों को बँटाईदारों या संबद्ध मजदूरों को बेचने पर मजबूर कर दिया था। यद्यपि कानून बिजूखों (खेतों में चिड़ियों को डराने वाले पुतलों) से जयादा डरावने नहीं थे, क्योंकि उन्हें मुश्किल से ही कभी लागू किया गया था। उन्होंने जमींदारों के मन में अनिश्चितता का भाव पैदा कर दिया था कि वे बहुत ज्यादा समय तक अपनी संपत्तियों पर कब्जा नहीं रख पाएँगे और इस धारणा ने देहात में जमीन का बाजार विकसित करने में मदद की थी।

परिवार नियोजन का चलन न होने से संयुक्त परिवारों के पुरूष सदस्यों की संख्या बहुत ज्यादा थी। उनके बीच भूमि बँट जाने के कारण खेत छोटे–छोटे टुकड़ों में बँट गए थे और प्रत्येक वंशज को अपने भूखंड कुछ भी करने की आजादी थी। इस तथ्य ने भूमि के बाजार का और अधिक विस्तार कर दिया था। बाजार में आई नई महँगी वस्तुओं की माँग को पूरा करने के लिए पूर्व जमींदारों और बड़े भू–स्वामियों ने भी भूखंड बेच दिए थे। अपनी बेटियों के लिए दहेज की रकम जुटाने के लिए गरीब गरीब और मझोले किसानों द्वारा अपनी जमीन के हिस्से बेच दिए जाने के उदाहरण भी कम न थे।[8] खेतिहर मजदूरों और उत्पादन की

2016, RHIMRJ, All Rights Reserved ISSN: 2349-7637 (Online)

ऊँची लागत वहन न कर पाने के कारण गरीब किसानों को भी अपनी जमीन बेचने के लिए बाध्य होना पड़ता था। राज्य में ग्रामीण भू–स्वामियों की स्थिति के रूपांतरण में इन सभी कारकों ने योगदान दिया था।

शहरी रोजगार तथा हरित क्रांति संपन्न राज्यों, पंजाब और हरियाणा में मौसमी प्रवासन के कारण भूमिहीन मजदूरों और गरीब किसानों के हाथों में पैसा आ गया था जिससे जमीन की माँग बढ़ी। कई क्षेत्रों में खेतों से दूर रहने वाले जमींदारों ने इन नए मेहनती सीमांत किसानों को अपने खेत पट्टे पर दे दिए। सिंचाई सुविधाओं के प्रसार से बँटाईदारी व्यवस्था में नाटकीय परिवर्तन हुए। पंजाब में हुए बँटाईदारी के 'उलटे प्रवाह' की तर्ज पर बड़े किसानों द्वारा कृषि की बढ़ती लागत से बेजार छोटे और सीमांत किसानों से जमीन पट्टे पर ले ली गई।

कृषि संबंधों में बदलाव लाने में ऊपर बताए कारकों से कहीं बड़ा योगदान भूमिहीन मजदूरों और गरीब किसानों की लामबंदी का रहा। बँटाईदारी की सुरक्षा तथा निर्धारित उच्चतम सीमा से अधिक पूर्व जमींदारों और धार्मिक ट्रस्टों की अतिरिक्त जमीन के वितरण के लिए जे.पी. प्रेरित युवाओं, समाजवादियों और कम्युनिस्टों के आक्रामक, लेकिन अहिंसक अभियानों और इनसे पहले उग्र कम्युनिस्ट संगठनों द्वारा किए गए सशस्त्र संघर्षों ने सामंती तत्वों के खिलाफ इतना प्रतिकूल वातावरण बना दिया था जैसा भूमि सुधार कानून और उनके छिटपुट क्रियान्वयन कभी नहीं कर पाए थे। ये अभियान जमींदारों से लोहा लेने और सरकार को कारवाई के लिए बाध्य करने तक ही सीमित नहीं रहे, कई मामलों में तो उन्होंने उन भूखंडों को छीन लेने का फैसला किया, जिनके बारे में उनके पास पक्की जानकारी थी कि वे अवैध रूप से कब्जाए गए थे।

लगभग सभी गाँवों में जमींदारों ने गाँव की सार्वजनिक उपयोग वाली जमीनों, सरकारी भूमि, सार्वजनिक तालाबों तथा अन्य सरकारी और सामुदायिक संपत्तियों के एक बड़े भाग पर जबरन कब्जा कर रखा था। उन पर खेती और मछली पालन के जरिए वे उनसे निजी आमदनी हासिल कर रहे थे। इन संपत्तियों पर से जमींदारों को हटाने के लिए उग्र कम्युनिस्ट समूहों द्वारा संगठित मजदूरों और किसानों ने संघर्ष किया और वे कई गाँवों में सार्वजनिक भूखंडों (गैर मजरूआ आम) और तालाबों पर फिर से कब्जा करने में सफल रहे। कुछ हद तक इस लामबंदी ने बँटाईदारी की शर्तों तथा बँटाईदारी और मजदूरों की मजदूरी की दरें बढ़ाने पर भी सकारात्मक प्रभाव डाला।

इस तरह, बिहार में भूमि संबंधों में ढाँचागत बदलाव काफी हद तक सामाजिक विकास की प्रक्रिया में अपने आप हो रहे थे। राजनेताओं और जमींदारों के बीच गहरी मिलीभगत के बावजूद ये बदलाव हो रहे थे। इन बदलावों में अपना योगदान देने वाले कारक थे : पहला, राजनीतिक वाहवाही लूटने के उद्देश्य से पारित किए गए कानून। दूसरा, बाजार की शक्तियों द्वारा ग्रामीण आबादी के लिए गाँव से बाहर खोल दिए गए आमदनी के नए स्त्रोत और तीसरा, किसान संगठनों द्वारा चलाए जा रहे आंदोलन। यह कहा जा सकता था कि कानूनों ने भूमि के घोड़े को थपथपाया, बाजार की शक्तियों ने उसे आगे बढ़ने के लिए ललचाया और किसान संगठनों ने उसे दौड़ने के लिए प्रेरित किया।

संदर्भ ग्रंथ–सूची :–

1. अरविंद नारायण दास, 'एग्रेरियन अनरेस्ट एंड सोसियो–इकॉनामिक चेंज, 1900–1980', पृ. 2।
2. एस. नूरूल हसन, 'आर्गनाइजेशन ऑफ अग्रेरियन इकॉनामी' थॉट्स ऑन एग्रेरियन रिलेशंस इन मुगल इंडिया, पीपुल्स पब्लिकेशन हाउस, नई दिल्ली, 1973, 1983, पृ. 17।
3. एच.टी. कोलब्रुक, 'रिमार्क्स ऑन दी हस्बैंड्री एंड इंटरर्नल कामर्स ऑफ बंगाल', कोलकता, (1904), पृ. 44।
4. ए.टी. एम्ब्री, 'चार्ल्स ग्रांट एंड ब्रिटिश रूल इन इण्डिया', लंदन, 1962, पृ. 115।
5. सिन रिपोर्ट, 2 अप्रैल, 1815 (राजस्व संकलन) खंड– 1, पृ. 331
6. उपेंद्रनाथ सिंह, 'सम आस्पेक्ट्स ऑफ रूरल लाइफ इन बिहार', पृ. 71।
7. डब्ल्यू.सी. नील, 'लैंड रिफॉर्म इन उत्तर प्रदेश', इंडिया (एजेंसी फार इंटरनेशनल डेवलप्मेंट, स्प्रिंग रिव्यु), 1970, पृ. 42।
8. अरविंद नारायण दास, 'रिपब्लिक ऑफ बिहार', पृ. 35 और पीजेंट अनरेस्ट एंड सोसियो–इकॉनामिक चेंज, 1900–1980, पृ. 186।

2016, RHIMRJ, All Rights Reserved *ISSN:* 2349-7637 (Online)